कई अमिरका हैं मेरे गाँव में

□ मुसहरनी अमिरका

मैं मुसहरनी...अमिरका! सामाजिक कार्यकर्त्ता हूँ। 'लोक-शक्ति' की उपसंचालिका भी। यह संगठन दलितों के बीच काम करता है।

मेरा जन्म कब हुआ, मेरे माँ-बाप ने मुझे नहीं बताया। लेकिन मैं अन्दाज़न अपनी उम्र बता सकती हूँ। 15 साल की उम्र में मेरी शादी हुई थी। 16 साल में मैं एक बेटे की माँ बन गई। बेटा जनने पर मेरे ससुराल वाले बड़े खुश थे। हमारे समाज में कहावत है न, 'बेटा से कोठा होई छै, कोठा से बेटा नई!' (बेटा से महल बनता है, महल से बेटा नहीं), 'जन्मे लागल पूत तऽ परल लगल़ दुख; कमाई लागल पूत तऽ भागल लागल

दुख।' (बेटा जन्म लेता है तो दुख आता है, पर जब धन कमाने लगता है तब दुख भाग जाता है।) अभी बड़ा बेटा 18 साल का है। यानी मेरी उम्र 33-34 साल है। कम उम्र में बच्चे जनने में मैंने बहुत दुख झेले हैं। मैंने सोच लिया कि बेटे का विवाह जल्दी नहीं करूँगी और कम उम्र की बच्ची से तो कभी नहीं। जब मेरी शादी हुई थी तो समझ नहीं थी, कम उम्र में शादी से क्या-क्या समस्याएँ आती हैं। यह भी मालूम नहीं था कि बच्चे कैसे पैदा होते हैं? मालूम होता तो मैं कभी-भी इतनी जल्दी और बार-बार माँ नहीं बनती। पति के व्यवहार एवं सास-ससुर के दबाव के कारण मैं बार-बार नैहर भाग जाती थी। लेकिन जब भी वे लोग विदा कर ससुराल ले जाते तो बच्चा ठहर जाता। दो बेटे और एक बेटी की माँ जल्दी ही बन गई। फिर बहुत दिनों के बाद ससुराल गई। तीन बच्चों के बाद हमने बात आगे नहीं बढ़ने दी। मैंने सोच लिया है, अपने बच्चों के साथ ऐसा नहीं होने दूंगी। समाज के दबाव तो हैं कि बच्चों के विवाह करूँ। पर मैं परिवार-समाज में समझ बनाने की कोशिश कर रही हूँ, कि वे हम पर दबाव न डालें और न स्वयं ही ऐसा करें। मैंने ग़लत परम्पराओं को रोकने की पहल खुद की है। नई पीढ़ी ने भी बात को समझा है। नब्बे प्रतिशत नवदंपति ने परिवार नियोजन किया है।

आपको एक मुसहरनी का 'अमिरका' जैसा अच्छा नाम सुनकर आश्चर्य हो रहा होगा। दुखिया, कारी, शनिचरी, फुलिया जैसा मेरा नाम नहीं है। जिस गाँव में मेरा बचपन बीता उस गाँव का नाम 'लोहना' है। लोहना, झंझारपुर अनुमण्डल में है, जो मधुबनी ज़िले में पड़ता है। बिहार का यह ज़िला नेपाल से सटा हुआ है। मेरे गाँव में ब्राह्मण बहुत अधिक हैं। इनके पास बहुत सारी ज़मीन है। ये कभी हमारे मालिक हुआ करते थे। मेरे दादा विलट सदाय इनके यहाँ हलवाई थे। मालिक के यहाँ से बीमारी, शादी-ब्याह के समय में क़र्ज़ लेते थे। उनके यहाँ सालों भर कमाने पर भी इतनी मज़दूरी नहीं मिलती थी, कि क़र्ज़ चुका सकें। सो एक तरह से बँधुआ मज़दूर थे।

मालिक की बेटी का नाम अमिरका था। दादाजी को यह नाम भा गया। उन्होंने सोचा क्यों नहीं हम भी अपनी पोती का नाम अमिरका रख दें, उन्होंने ऐसा कर भी दिया। कुछ दिनों बाद यह बात मालिकों के कान तक पहुँच गयी। दादाजी की बुलाहट हुई। पूछा गया कि क्या यह बात सच है? दादा जी ने स्वीकार कर लिया। उन्होंने कहा कि सभी बच्चे तो भगवान की देन हैं। फिर आप लोग ऐसा क्यों कहते हैं? दादाजी को

डाँट पड़ी और नाम बदलने को कहा गया। उनके मौन को, स्वीकृति समझ कर बैठक ख़त्म कर दी गयी। जब मैं थोड़ी बड़ी हुई तो दादा जी ने ये घटना मुझे बताते हुए कहा, ''बेटी मैंने तय कर लिया था, कि तुम्हारा नाम नहीं बदलूँगा चाहे जो भी सज़ा भुगतनी पड़े। परिणाम यह हुआ कि आज कई अमिरका हो गई हैं मेरे गाँव में।''

छोटी 'जात' और बड़ी बात?

इस बीच मेरे गाँव में कम्युनिस्ट पार्टी के नेता भोगेन्द्र झा मेरे मुसहरी (टोला) में आने-जाने लगे। मेरा बड़ा भाई जगदीश सदाय जो दसवीं पास कर बिना काम के आवारा घूमता रहता था, कम्युनिस्ट पार्टी का मेम्बर बन गया। मुझे याद है कि दादा, पिताजी और माँ दिन-रात रात मालिक के घर में काम करते थे। उसके बावजूद हम लोगों का पेट नहीं भरता था। और अकसर हमें भूखे सो जाना पड़ता। मैं बकरी चराने जाती थी तो साथ में खुरपी रखती थी। जब बकरी चरती रहती तो मैं खेतों में खुरपी से मिट्टी खोदकर 'केशोर' नामक जंगली कंद निकालती। दिनभर में दो किलो निकाल लेती थी। कुछ कच्चा खा जाती थी बाकी डेढ़-दो किलो घर लाती थी। सूअर भी अपने थूथन से मिट्टी खोदकर इसे निकालकर बड़े चाव से खाते थे। 'केशोर' उबालकर माँ बच्चों के सामने रख देती। तब जाकर पेट भरता था। माँ-दादी मारकीन की एक-एक साड़ी में साल भर गुज़ारा करती थीं। दादा और पिताजी भी एक-एक धोती में पूरा साल गुजारते थे। मेरे मामा जुगेश्वर कलकत्ता में मज़दूरी करते थे। यदि उन्होंने मदद नहीं की होती तो हम भाई-बहनों के शरीर पर कपड़ा भी नहीं होता।

मुझे मन ही मन गुस्सा आता। मैं छुआछूत को मन से ग़लत मानती थी। पर ये सब ख़त्म कैसे होगा, समझ में नहीं आता था।

अब अपनी ज़मीन है!

सी.पी.आई के भोगेन्द्र झा जब हमारे टोले पर आने लगे तो, कुछ-कुछ रास्ता दिखाई देने लगा। ये भोगेन्द्र झा वही हैं जो पिछले ज़िला परिषद् के चुनाव में मधुबनी से हार गए थे। हमारे यहाँ तीन-चार कोस ज़मीन रखने वाले ज़मींदार मोहन बाबू के ख़िलाफ़ मुसहरी के लोगों ने संघर्ष किया। इस लड़ाई को रास्ता कम्युनिस्ट पार्टी ने ही दिखाया था। संघर्ष में कई बार जेल जाना पड़ा, ज़मींदार से आमना-सामना हुआ तब जाकर

आज पूरे मुसहरी में सबके पास 7.8 कट्ठा ज़मीन है। जब हम ताक़तवर हुए, तब मैंने जानबूझ कर मालिक के खाने की थालियों को छू दिया। इसके पहले नाश्ता खेत में आता था, तो थाली से रोटी निकालकर हलवाहों के हाथ में दिया जाता था। मैंने भी सोचा देखती हूँ कितनी थाली को लोग छूआने के बाद अलग रखते हैं। हम संघर्ष से मज़बूत हुए थे, इसीलिए मालिकों की तरफ़ से कड़ी प्रतिक्रिया नहीं हुई। अब तो ब्राह्मणों के टोला पर लगे चापाकल से हमें पानी पीने से कोई नहीं रोकता। पहले हमें गाँव से बाहर के कुओं से पानी लाना पड़ता था। अब तो सरकार एवं एस.एस.बी.के. ने कई चापाकल हमारे टोले में गाड़े हैं। अब अपनी ज़मीन है। फूस के अधिकतर घर इंदिरा आवास योजना में पक्के बन गये। मैं पढ़-लिख नहीं सकी, पर मेरे सभी बच्चे स्कूल जाते हैं। बड़ा बेटा तो दिल्ली में कमाता है।

''मैं अपने भाई से कहती, भैइया हमें पढ़ा दो। भैइया कहता, लड़की हो पढ़-लिखकर क्या करोगी? बकरी चराओ! मैं पढ़ना चाहती थी, क्योंकि मुझे लगता था कि पढ़ने-लिखने से हमारी ज़िंदगी सुधर जाएगी। हम भी पढ़े-लिखे लोगों की तरह इज़्ज़त की ज़िंदगी जी सकेंगे। छोटी थी तो छुआ-छूत क्या होता है, नहीं जानती थी पर जैसे-जैसे बड़ी होती गई बड़े लोगों के गाली-गलौज और व्यवहार मुझे सब समझ में आने लगे। मैं ब्राह्मण की बेटियों से पूछती थी, क्या खेत में तुम्हारे अनाज रोपने के समय हमसे नहीं छुआता। वे कहतीं कच्ची चीज नहीं छुआती है। जब मैं कहती कि मडुआ की पिसाई के समय तो वह कच्चा नहीं रहता तो इस पर वे कुछ नहीं कहतीं। पर ये ज़रूर कहतीं छोटी होकर बड़ी-बड़ी बात मत करो। तुम्हारे मालिक सुनेंगे तो जबान उखाड़ लेंगे।''

लेकिन ब्राह्मण होता है ब्राह्मण, चाहे वह किसी पार्टी का हो। मेरा भाई पार्टी के लिए पूरा समय देता था। घर-बार नहीं देखता था। मेरे पिताजी ने कहा—अपने बाल-बच्चों को देखो। उनका चूल्हा अलग कर दिया। भाई जगदीश मेहनत-मजूरी करने लगा। अब पार्टी के लिए उसके पास समय नहीं था। वह अब मीटिंगों में कम जाने लगा। पहले पार्टी के लिए चंदा इकट्ठा करता था। अब गाँव से जाना कम हो गया। एक दिन भोगेन्द्र झा गाँव आए तथा भाई को बुलवाया। पर भाई रोज़ी-रोटी में फँसे रहे। दूसरे-तीसरे दिन ब्राह्मणों की टोली में चोरी हुई। भोगेन्द्र झा फिर आए। पर इस बार बड़े-बाबू (दारोगा) को साथ लेकर आए थे। भाई दूसरी

बार दो किलोमीटर दूर मखाना के तालाब पर नारायणपुर काम करने गया था।

फरसे से मुक़ाबला

दारोगा जी को लेकर नेता जी मेरी फूस की झोपड़ी में आ पहुँचे। मैं तब 15 साल की थी, मेरी बहन चौदह की होने वाली थी। उनकी चमकती आँखों को देखकर हम दोनों घबरा गये और घर में जाकर छुप गये। दादी-दादा ने कहा जगदीश घर पर नहीं है रात होने वाली है, कल आइएगा। पर दारोगा और नेताजी की नीयत साफ़ नहीं थी। रात में टोले में मेरे घर पर ही रुक गए। नेताजी ने मीट और दारू मँगाया। मेरी दादी और माँ को बात समझ में आने लगी थी। दोनों ने कुट्टी काटने वाला चमकीला फरसा ले लिया और घर के दरवाजे के पास बैठ गयीं। फरसा उन्होंने छुपा लिया। दारोगा जी ने दादी-माँ को सोने को कहा। दादी एवं माँ ने मिट्टी के तेल की ढीबरी जला दी और फरसा लेकर घर के अन्दर बैठ गईं। बाहर घुप्प अंधेरा था। मुझे और बहन को पीछे काकी के घर में चुपके से छिपा दिया। आधी रात में एकाएक दरवाजे की कुंडी खड़खड़ाई। चार आँखों ने अंदर झाँका। अन्दर की चार लहकती हुई आँखें और चमकते हुए फरसे के बीच आपस में टकराहट हुई। फिर चारों आँखें ग़ायब हो गईं। थोड़ी देर बाद आँगन में बिछी खाट से ख़र्राटे की आवाज़ गूँजने लगी। मुझे याद है बाहर से ख़र्राटों की आवाज़ सुनाई देती रही, पर दादी-माँ की आँखों की पलकें एक बार भी न झपकीं। रात में भैइया लौटे तो बाहर ही लोगों ने उन्हें रोक लिया। वह तीन-चार बजे सुबह ही आस-पास के गाँव में घूम लिये। सभी गाँव के दलित कॉमरेड पहुँच गए। दरोग़ा जी और ब्राह्मण कॉमरेड ने भागना चाहा, तो लोगों ने उन्हें जाने नहीं दिया। सुबह पंचायत हुई। बातें पार्टी में ऊपर नहीं पहुँचे तथा आलाकमान तक शिकायत नहीं पहुँचे इस भय से दोनों ने ग़लती मान ली। मीटिंग में सार्वजनिक रूप से माफ़ी भी माँगी। इस घटना के बाद से गाँव का दरवाज़ा सी.पी.आई. के लिए हमेशा के लिए बन्द हो गया। लेकिन इस घटना के बाद मुसहरी पर कोई न कोई आफ़त आती रही। एक दिन गाँव के लोग पटना जंक्शन पहुँचे। उन्हें मज़दूरी करने के लिए पंजाब जाना था। प्लेटफॉर्म पर उन्हें गिरफ़्तार कर लिया गया। इन पर गाँव के मालिक के यहाँ चोरी करने का इल्ज़ाम था। हमने गाँव में मुसहरी के

सामूहिक सहयोग से निर्मित ग्रामकोष से 1100 रुपये निकालकर उन्हें जेल से छुड़ाया। यह ग्रामकोष हमने 'लोकशक्ति संगठन' से जुड़ने के बाद बनाया था।

समाज के कामों में महिलाओं की भूमिका मधुबनी में आजकल बढ़ गई है। कमला नदी के तटबंध टूटने से बाढ़ एवं जलजमाव के कारण हमारे यहाँ खेती का काम कम हो गया है। जिसकी वजह से गाँव में रोज़गार की कमी हो गयी है। हमारे मर्द बाहर काम ढूँढ़ने चले जाते हैं और गाँव में बचते हैं, बच्चे, बूढ़े और महिलाएँ। समाज की देखभाल हमें ही करनी पड़ती है। अधिकतर लोग पंजाब जाने लगे हैं। नक़दी का महत्त्व अब बढ़ गया है। पंजाब से नक़दी भेजने के कारण हमारे पास नक़दी धन रहता है। इस कारण से हमें किसी के सामने झुकना नहीं पड़ता। और अब हम सम्मान के साथ जीने लगे हैं।

...तुम लोग फिर ठगने आ गए?

मैं 1990 से अपने ससुराल 'सोहराय' में रह रही हूँ। यहाँ भी मैंने महिलाओं को संगठित किया है। 1992 की बात है। मैं धान रोपकर मिट्टी से सनी हुई लौट रही थी कि मुझे बाहर शोर सुनाई दिया। मैंने बाहर आकर देखा कुछ खादीधारी लोग गाँव के पुरुषों को समझाने की कोशिश कर रहे हैं, पर लोग उनकी बात सुनने को तैयार ही नहीं हैं। मैंने सोचा कोई नया कॉमरेड आ गया है। मैं झल्लायी और सीधा उन खादीधारियों के पास पहुँच गयी। और कहा "तुम लोग फिर ठगने और उल्लू बनाने आए हो, चले जाओ।" पर आने वाले लोग हमारी बातों से नाराज़ नहीं हुए। हमारे गुस्से को सहन करते हुए अपना परिचय दिया जोगी, हरि और दीपक। मुझे पहली बार ऐसे नाम सुनने को मिले, जिनमें जाति का कोई अता-पता नहीं था। ये लोग बार-बार जयप्रकाश नारायण का नाम ले रहे थे। हम लोगों ने तब तक जयप्रकाश नारायण का नाम नहीं सुना था। इन लोगों ने अपनी पार्टी की बात नहीं की बस हमें संगठित होने को कह रहे थे। मेरे ससुराल वालों ने अब तक मेरे नैहर की तरह कोई लड़ाई नहीं लड़ी थी। उनके बात करने का तरीक़ा मुझे अच्छा लगा। मैंने गाँव की महिलाओं को एकजुट किया। मेरे साथ फुलिया और सोनी भी थी। मैंने उन लोगों से कहा यदि आप चाहते हैं कि हम आगे बढ़ें तो पहले हमें पढ़ना-लिखना सिखावें। मेरे बच्चों को पढ़ाने की कुछ व्यवस्था करें। पढ़ने से कम-से-कम हमारे बच्चों को

हिसाब-किताब तो आ जाएगा। कोई उनकी ठगी नहीं करेगा। उन लोगों ने गाँव में पढ़ाना शुरू किया। हमने लड़के-लड़कियों को पहली बार पढ़ने भेजा। मुझे लगा मेरे बचपन की इच्छा अब पूरी हुई। मेरे बच्चे पढ़ेंगे तो हम भी आगे बढ़ेंगे।

बैठक में जब महिलाओं से उनके पति का नाम पूछा जाता, तो कुछ शर्मातीं और कुछ प्रश्न पूछने से नाराज़ हो जातीं। झंझारपुर अंचल में एक कहावत है कि 'यदि अपने पति का नाम लिया तो पुनर्जन्म गदहे के रूप में होगा।' पर हमने उन्हें समझाया कि समय बदल गया है। कागज-पत्तर में नाम की ज़रूरत तो पड़ेगी ही। हमारा पति पंजाब, हरियाणा, दिल्ली में रहता है, ज़रूरत पड़ने पर क्या हम नाम नहीं ले सकतीं। शुरुआत मैंने की, अपने पति का नाम लिया। धीरे-धीरे सभी महिलाओं में झिझक समाप्त हो गयी।

...मर्द से बजै छै

इसके बाद मैंने उत्प्रेरक की ट्रेनिंग ली 'लोकशक्ति संगठन' कार्यालय में 20 दिन तक पदयात्राएँ कीं। अब मेरी आँखें पूरी तरह खुल गयी थीं। मैंने सोचा पहला संघर्ष अपने ससुराल से ही शुरू करूँ। पर गाँव पहुँचते ही, फुलिया, सोनी व मेरे ऊपर हमारे पुरुषों ने ही हमला बोल दिया।

बीस दिन से ज़्यादा समय तक पहली बार हम लोग गाँव से बाहर रहे थे। हमारी बढ़ती सजगता को गाँव के बड़े लोगों के लिए ख़तरे की घंटी समझा गया। पुरुषों पर वे अपनी चला सकते थे, पर हम स्त्रियों पर उनकी एक नहीं चलती थी। इसीलिये उन्होंने हमारे पतियों के कान भर दिये। गाँव लौटते ही हमारे पुरुषों ने हमसे कहा—"कैसन महिला छै, मर्द से बजै छै, घर छोड़के बाहर रहै छै, व्यभचारी भगैलै" (कैसी महिला है, मर्दों से बात करती है, घर छोड़कर बाहर रहती है, इसका चरित्र ख़राब हो गया है।) हमारे सामने विकट स्थिति थी। हमने शिविर में क्या-क्या विचार-विमर्श किया था। गाँव के तालाब पर कब्ज़ा करने का भी सोचा था। पर यहाँ तो हम पर पाबंदी लगाने की तैयारी चल रही थी। हम तीनों गुप्त रूप से आपस में मिले और निश्चय किया कि चाहे जो भी हो हम समझौता नहीं करेंगे। मर्द साथ दें या न दें, हम स्त्रियों को संगठित करके संघर्ष करेंगे। अत: हम तीनों ने अपने-अपने मर्दों को समझाने की ठानी। मेरा पति छ: महीने बाद पंजाब से काम करके लौटा था। रात

में उसने कहा—नेतागिरी छोड़ दो, बाहर जाकर पता नहीं किस-किसके साथ फँसी हुई हो। हमारी बदनामी कर रही हो। मुझे पति की बातों पर गुस्सा आया, दुखी भी हुई। पर मैंने समझा कि यह मेरा पति नहीं कोई ब्राह्मण बोल रहा है। मैंने अपने मुसहर पति को समझाने की कोशिश की। तुम छ:-छ: महीने मेरे बिना पंजाब में रहते हो? मैंने आज तक तुमसे कोई सवाल किया? जो कुछ आरोप तुमने लगाए मैं भी तुम पर लगा सकती हूँ। जगदीश सदाय को कोई जवाब नहीं सूझा। जब दु:ख के दिन थे, घर में हम भूखे रहते थे, तब मैं चाहती तो तुम्हें छोड़ कर दूसरा विवाह किसी भी अमीर व्यक्ति से कर सकती थी। कठिनाई के समय तो तुमसे चिपकी रही। अब तो हमारी स्थिति अच्छी है, और बच्चे भी पढ़-लिख रहे हैं। क्या तुम नहीं चाहते कि मुसहरी के सभी लोग हमारी तरह बनें? हमारे बाल-बच्चों को बँधुआ मज़दूरी न करनी पड़े। क्या तुम भी चाहते हो मुसहरी दूसरे लोगों की दया पर जिए? हमारी बहू-बेटियों को ज़लील होना पड़े? जगदीश को मेरी बातें समझ में आ गईं। उसने फिर कुछ नहीं कहा। फुलिया एवं सोनी ने भी अपने घरवालों को समझा लिया। बड़े लोगों द्वारा चलाया गया हथियार फ़ेल हो गया। लेकिन हम अपने पतियों के अलावा अन्य मर्दों को नहीं समझा सके। हमने मन ही मन तय किया कि महिलाओं को संगठित करेंगे। और हम इस कार्य में जुट गये। फुलिया ने जमकर मेरा साथ दिया। हमने ठान लिया कि मर्द भी देखें, औरतें कैसे लड़ती हैं? कैसे जीतती है?

मर्द भी देखें औरतें कैसे लड़ती हैं

गाँव की 7 एकड़ ज़मीन में फैले तेवारी तालाब पर मुख्यमंत्री लालू प्रसाद के एक समाजवादी ब्राह्मण मंत्री का क़ब्ज़ा था। हम महिलाओं ने ठेके पर मछली मारने आए मछुआरों को कहा कि तालाब हमारा है। आप चले जाएँ। वे लोग नहीं माने। उन्होंने तालाब को साफ़ कर जलकुंभी बाहर निकाली। हमने और बच्चों ने मिलकर जलकुंभी को तालाब में डाल दिया। मारी गई मछलियों को भी पानी में डाल दिया। पाँच दिन तक गाँव की महिलाएँ और बच्चे यही करते रहे। हम लोग जानते थे कि तालाब पर मंत्री जी का ग़ैर-क़ानूनी क़ब्ज़ा था, कोई बोली तालाब के ठेके के लिए नहीं लगी थी। हमने 25 किलो मछली का ज़ीरा पानी में डाल रखा था। तालाब की देखरेख करने वाली (एफ.डी.ए.) 'फारमर्स डेवलपमेंट एजेंसी' को बुलाकर यह क़ब्ज़ा दूसरे को दिला दिया। मछली बड़ी हुई, पुलिस के संरक्षण में तालाब

की सारी मछली मारी गई। हमने उनसे मछली लूट ली! हम पर मुक़दमा चला और हम लड़े। अन्ततः बड़े लोगों को हार माननी पड़ी। अब तालाब पर गाँव के मछुआरों का क़ब्जा है। तालाब से कमाई का कुछ हिस्सा मुसहरी हित के लिए ग्राम कोष में जमा होता है।

तेवारी तालाब के बाद महिलाओं ने अंधरा तालाब पर क़ब्ज़ा किया। अब तक हमने दर्जनों तालाब एवं सैंकड़ों एकड़ भूमि पर क़ब्ज़ा कर लिया है। हमारी लड़ाई की जीत ने हमारे मर्दों का सम्मान बढ़ाया। जिससे उनका आत्मविश्वास फिर से लौट आया, उनमें हिम्मत पैदा हो गई और उन्होंने हमारा साथ दिया। अंधरा तालाब पर क़ब्ज़े के लिए मालिक लूटन सिंह से तेज संघर्ष हुआ। लेकिन उसकी बंदूक काम नहीं कर सकी। गाँव में आग लगाने की उसकी इच्छा अधूरी रह गई। लीला, प्रभा, सोमनी और मेरे सहित 18 मुसहरों पर मुक़दमा चला। लूटन सिंह जी कोई काग़ज प्रस्तुत नहीं कर सके। इस तरह अंधरा तालाब पर हमारा क़ब्ज़ा हो गया। गाँव के कमज़ोर लोग अब संगठित हो गये हैं और यह लड़ाई मुसहरी से शुरू होकर आगे बढ़ चुकी है। आज हर एक दलित अपने आप को 'एक वोट का आदमी' मानता है।

आज जबकि हम लोग मज़बूत हो गये तो सरकार हमें कमज़ोर करने पर तुली है? लगता है राबड़ी देवी की सरकार ब्राह्मणों की सरकार बन गई है। वे भूल रही हैं कि सत्ता ब्राह्मणों ने नहीं दिलवायी। यहाँ कमला बलान एवं कोशी नदी पर बाँध मरम्मती का काम चल रहा है। 80 करोड़ रुपये का ठेका है। आज मिट्टी काटने एवं हटाने का काम राजस्थानी ट्रैक्टर कर रहे हैं। मुसहर मिट्टी काटने में माहिर होते हैं। लेकिन आज एक भी मुसहर मिट्टी के काम में नहीं है। अब हाथ को नहीं, मशीन को काम मिल रहा है। बिहार सरकार के सिंचाई विभाग का आदेश है कि अधिकतम काम राजस्थानी ट्रैक्टर से लिया जाए। पहले ठेके का 70 प्रतिशत काम सरकार हमसे करवाती थी। आज 80 करोड़ का 70 प्रतिशत यानी 56 करोड़ रुपया मशीनें, ठेकेदार और सरकारी लोग मिलकर खा रहे हैं। झंझारपुर के 2 लाख मज़दूरों के लिए राबड़ी सरकार चिंतित नहीं है। राजस्थान का मैसी ट्रैक्टर 400, 500 की संख्या में पूरे जलांचल में फैल गया है।

एक वोट का आदमी

8 मार्च, 2003 को मैं झंझारपुर के रहि टोला में राजस्थानी ट्रैक्टर के सामने आकर खड़ी हो गयी। मेरे साथ उसी गाँव की 5-10 महिलाएँ भी थीं। मेरी बेटी मेरी तरफ़ बढ़ते ट्रैक्टर को देखकर चिल्लाई। "माइ हइट जाऊं, ट्रैक्टर दाइब देव (माँ हट जाओ, ट्रैक्टर दबा देगा)" मैंने कहा—डरो मत और नारा लगाया। "राजस्थानी ट्रैक्टर हटाओ, मज़दूरों को काम पर लगाओ।" किसान मिश्री लाल यादव ने भी मेरा साथ दिया था। मिश्री के खेत की ज़मीन राजस्थानी ट्रैक्टर बेतरतीबी से काट रहा था। मुसहर का हाथ किसान की ज़मीन बचा सकता है। आख़िर किसान और मुसहर के रिश्ते वर्षों से हैं। मशीन यह रिश्ता कैसे बना सकती है। जहाँ तहाँ गड्ढे हो रहे हैं, और बरसात में इन गड्ढों में पानी भर जायेगा। खेत भी जल-जमाव में फंस जायेंगे। यही हाल रहा तो किसान मारा जाएगा। मिश्री का दूसरे किसानों ने साथ नहीं दिया। मुसहर पहले मिट्टी सलीके से काटते थे। उनका हाथ किसानों के पेट पर कभी लात नहीं मारता था। किसानों के पेट के साथ मुसहर का पेट जुड़ा हुआ है। मशीन, ठेकेदार एवं अफ़सरों को किसानों के पेट से क्या मतलब? उन्हें तो नोट चाहिए!

ट्रैक्टर ड्राइवर ने मेरे नज़दीक आकर ट्रैक्टर रोक दिया और कहा, पुलिस बुलाओ, कलक्टर बुलाओ। मैं जानती थी कि सरकारी आदेश है। मैंने कहा, मैं क्यों बुलाऊँ। जिसको आना होगा, यहीं आएगा। और हुआ भी यही। ठेकेदार आया उसने कहा, राजस्थानी ट्रैक्टर के उपयोग का सरकारी आदेश था। मज़दूरी नहीं देनी पड़ेगी, इसीलिए हमने कम पैसे की बोली लगाकर इतना बड़ा काम लिया है। आख़िरकार फ़ैसला यह हुआ कि राजस्थानी ट्रैक्टर, स्थानीय ट्रैक्टर और मज़दूर मिलकर काम करेंगे। यह समझौता हमें सरकारी नीतियों के कारण करना पड़ा।

मुझे लगता है कि इन तथाकथित ब्राह्मणों के ख़िलाफ़ हम महिलाओं को बार-बार जन्म लेकर संघर्ष करना पड़ेगा। मैं घर से निकलती हूँ, तो अपने साथ गाँव की श्रीवती देवी को ले लेती हूँ। सोचती हूँ कोई तो गवाह रहे जो हमारे नहीं रहने पर भी संघर्ष का झंडा बुलंद करता रहे।

प्रस्तुति : **प्रभात कुमार**